



2026:AHC: 26136

उच्च न्यायालय, इलाहाबाद

मामला अंतर्गत अनुच्छेद 227 संख्या - 650 वर्ष 2026

श्री गोपाल किशन खंडेलवाल

.....याचिकाकर्ता(गण)

बनाम

श्रीमती अर्चना त्रिपाठी

.....प्रत्यर्थी(गण)

याचिकाकर्ता(गण) के अधिवक्ता

:

प्रखर टंडन

प्रत्यर्थी(गण) के अधिवक्ता

:

मनीष टंडन

न्यायालय संख्या-35

प्रकाशनार्थ स्वीकृत

माननीय न्यायमूर्ति डॉ. योगेंद्र कुमार श्रीवास्तव

भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के अंतर्गत यह याचिका, कानपुर नगर की लघुवाद न्यायालय के न्यायाधीश द्वारा एस.सी.सी. वाद संख्या 12/2020 (अर्चना त्रिपाठी बनाम गोपी किशन खंडेलवाल) में 04.02.2025 को पारित आदेश को चुनौती देने के लिए दायर की गई है। इस आदेश के ज़रिए, याचिकाकर्ता (किरायेदार) द्वारा साक्षी डी.डब्ल्यू.-1 को दोबारा बुलाने/दोबारा परीक्षण करने के लिए दायर आवेदन संख्या 99सी/99-जीए को खारिज कर दिया गया था। याचिकाकर्ता ने कानपुर नगर के अपर जिला न्यायाधीश, न्यायालय संख्या 24 द्वारा एस.सी.सी. पुनरीक्षण संख्या 81/2025 में 19.09.2025 को पारित उस बाद के आदेश को भी चुनौती दिया है, जिसके तहत विचारण न्यायालय के आदेश के खिलाफ दायर पुनरीक्षण याचिका को खारिज कर दिया गया था।

2. यह याचिका 'सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश XVIII नियम 17 और भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872' की धाराओं 137, 138 और 145 के दायरे और उनके प्रयोग से जुड़ा एक अहम सवाल उठाती है। इसमें खास तौर पर साक्ष्य में रह गई कमियों को भरने की अवैध कोशिश और साक्षी के बयान में किसी अस्पष्टता को साफ करने की जायज़ कोशिश के बीच के सूक्ष्म

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



अन्तर पर ध्यान दिया गया है, ताकि न्यायालय सत्य तक पहुँच सके और निष्पक्ष न्यायनिर्णयन हो सके।

3. एस.सी.सी. मूल वाद सं. 12/2020 प्रतिवादी/वादी ने संपत्ति खाली कराने, बकाया किराया और जुर्माना वसूलने के लिए दायर किया था। इसमें उन्होंने 10.11.2010 की वसीयत के आधार पर संपत्ति पर अपना मालिकाना हक जताया था। याचिकाकर्ता/प्रतिवादी ने 18.02.2021 को लिखित बयान दाखिल करके वाद का विरोध किया। उन्होंने कहा कि 2010 से किराया वादी को नहीं दिया गया था, बल्कि संपत्ति की मूल मालकिन सत्यवती त्रिपाठी के बेटे देवेंद्र कुमार त्रिपाठी को मिल रहा था। यह भी कहा गया कि वादी जिस 10.11.2010 की वसीयत पर भरोसा कर रहे थे, वह मूल मालकिन द्वारा बाद में 21.01.2012 को बनाई गई वसीयत से रद्द हो गई थी; मूल मालकिन की मृत्यु 23.04.2019 को हुई थी। प्रतिवादी के अनुसार, मूल मालकिन की मृत्यु से पहले और बाद में भी किराया देवेंद्र कुमार त्रिपाठी को ही मिलता रहा।

4. जवाब-तलब में, वादी ने माना कि देवेंद्र कुमार त्रिपाठी पहले किराया लेते थे, हालाँकि उसने दावा किया कि उसके बाद किराया पाने की हकदार वह हो गई थी। सुनवाई के दौरान, पी.डब्ल्यू.-1 यानी कर्मेंद्र त्रिपाठी ने प्रति-परीक्षा में माना कि किराया रसीदों (जिन पर कागज सं. 81-जी.ए. से 86-जी.ए. तक के निशान लगे थे) पर मौजूद हस्ताक्षर देवेंद्र कुमार त्रिपाठी के ही थे और वे हस्ताक्षर असली हस्ताक्षरों से मेल खाते थे।

5. प्रतिवादी डी.डब्ल्यू.-1 के तौर पर गवाहों के कटघरे में आया और साक्ष्य के तौर पर अपना शपथपत्र दाखिल किया, जिसमें उसने साफ तौर पर कहा कि किराया देवेंद्र कुमार त्रिपाठी को मिला था और किराया रसीदें भी उन्हीं ने जारी की थीं। देवेंद्र कुमार त्रिपाठी के हस्ताक्षर वाली असली किराया रसीदें भी अभिलेख पर लाई गईं। हालाँकि, 16.12.2024 को प्रति-परीक्षा के दौरान, डी.डब्ल्यू.-1 ने यह बयान दिया कि देवेंद्र कुमार त्रिपाठी ने किराया रसीदें जारी नहीं की थीं। यह बात विवादित नहीं है कि जब यह बयान दर्ज किया गया, तब प्रतिवादी का अधिवक्ता वहाँ मौजूद नहीं था।

6. शपथपत्र और प्रति-परीक्षा के दौरान दिए गए बयान में साफ तौर पर विरोधाभास होने के बावजूद, वादी के अधिवक्ता ने साक्ष्य अधिनियम की धारा 145 के तहत ज़रूरी होने पर भी डी.डब्ल्यू.-1 का सामना उसके पहले के शपथपत्र या अभिलेख पर मौजूद किराए की रसीदों से नहीं कराया। साथ ही, डी.डब्ल्यू.-1 को इस अंतर को समझाने का कोई मौका भी नहीं दिया गया। इस

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



तरह, अभिलेख पर मौजूद सामग्री को मिलाकर देखने पर, इस बात का समर्थन करने वाले तीन साफ़ और एक जैसे साक्ष्य मिलते हैं कि किराया देवेंद्र कुमार त्रिपाठी को मिला था और किराए की रसीदें उन्होंने ही जारी की थीं: यानी जवाब में वादी की बात मानना, प्रति-परीक्षा में पी.डब्ल्यू.-1 की बात मानना, और साक्ष्य के तौर पर अपने शपथपत्र में डी.डब्ल्यू.-1 का साफ़ बयान है।

7. इन हालात में, प्रतिवादी ने साक्ष्य अधिनियम की धारा 137 और 138 के तहत आवेदन संख्या 99सी-2/99ग दाखिल किया। इसमें डी.डब्ल्यू.-1 से पुनः परीक्षा की मांग की गई, ताकि प्रति-परीक्षा के दौरान दिए गए बयान से पैदा हुई अस्पष्टता को साफ़ किया जा सके; इसका उद्देश्य कोई अतिरिक्त या नया साक्ष्य पेश करना नहीं था। विचारण न्यायालय ने 04.02.2025 के आदेश से इस आवेदन को खारिज कर दिया। न्यायालय ने कहा कि इस मांग का मतलब सबूतों में रह गई कमियों को पूरा करना है। पुनरीक्षण न्यायालय ने 19.09.2025 के आदेश से इस खारिज करने के निर्णय को सही ठहराया। न्यायालय ने कहा कि सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश XVIII नियम 17 के तहत मिली शक्ति का प्रयोग बहुत सोच-समझकर और कम ही किया जाना चाहिए। साथ ही, अलग-अलग गवाहों के बयानों में विरोधाभास था, और यह आवेदन बहुत देर से कमियों को पूरा करने की कोशिश लग रही थी, जबकि वाद अंतिम बहस के लिए तैयार था और उसे जल्द निस्तारण के निर्देश दिए जा चुके थे।

8. याचिकाकर्ता के अधिवक्ता ने तर्क दिया है कि अवर दोनों न्यायालयों ने विधि को समझने में त्रुटि किया है। उन्होंने सबूतों में कमी को ठीक करने और अभिलेख में मौजूद किसी अस्पष्टता को स्पष्ट करने के बीच के स्थापित अंतर को समझे बिना, दोबारा परीक्षण की मांग को केवल कमियों को भरने की कोशिश मान लिया। यह कहा गया है कि जिस विरोधाभास की बात कही जा रही है, उसे साक्ष्य अधिनियम की धारा 145 के अनुसार कभी भी डी.डब्ल्यू.-1 के सामने नहीं रखा गया था, इसलिए विधि की दृष्टि में इसे विरोधाभास नहीं माना जा सकता। यह भी कहा गया है कि दोबारा परीक्षण से इनकार करने के कारण गंभीर नुकसान हुआ है और निष्पक्ष मौका नहीं मिला है, इसलिए संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत दखल देने की आवश्यकता है।

9. इसके विपरीत, प्रतिवादी के अधिवक्ता ने आक्षेपित आदेशों का समर्थन करते हुए कहा कि सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश XVIII नियम 17 के तहत किसी पक्ष को साक्षी को वापस बुलाने या उससे पुनः परीक्षण करने का अधिकार नहीं मिलता है, और अवर न्यायालयों द्वारा इस्तेमाल किए गए विवेक में कोई मनमानी या क्षेत्राधिकार संबंधी त्रुटि नहीं है।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



10. इस विषय पर विधि अब कोई नई बात नहीं रह गई है। **शुभकरण सिंह बनाम अभयराज सिंह** वाद में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश XVIII नियम 17 के तहत मिली शक्ति किसी केस को सही ढंग से चलाने के लिए ज़रूरी है और न्यायालय इसका इस्तेमाल किसी भी स्तर पर, यहाँ तक कि निर्णय लिखते समय भी कर सकता है। हालाँकि, साथ ही इस बात पर भी ज़ोर दिया गया कि ऐसी शक्ति का इस्तेमाल बहुत कम और सिर्फ़ खास हालात में ही किया जाना चाहिए, और इसका उद्देश्य सिर्फ़ अस्पष्टताओं को दूर करना या बयानों को साफ़ करना है, न कि किसी पक्ष के वाद में रह गई कमियों को पूरा करना। आगे यह भी कहा गया कि हालाँकि आदेश XVIII नियम 17 के तहत शक्ति मुख्य रूप से न्यायालय के पास होती है, लेकिन किसी पक्ष के कहने पर दोबारा बुलाने या पुनः परीक्षा करने की अनुमति, सही मामलों में, सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 151 के तहत मिली अंतर्निहित शक्तियों का इस्तेमाल करके दी जा सकती है।

11. **के. के. वेलुस्वामी बनाम एन. पलानीस्वामी** वाद में इस बात को फिर से दोहराया गया कि सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश XVIII नियम 17 का मुख्य उद्देश्य न्यायालय को अभिलेख पर मौजूद सबूतों से पैदा होने वाले किसी भी संदेह या मुद्दे को स्पष्ट करने में मदद करना है, और प्रक्रिया से जुड़े नियम न्याय को आगे बढ़ाने के लिए होते हैं, न कि उसे रोकने के लिए। यह अभिनिर्धारित किया गया कि अगर आवेदन सही नीयत से दी गई है और मांगी गई स्पष्टीकरण से न्यायालय को न्याय करने में मदद मिलेगी, तो साक्षी को वापस बुलाने या पुनः परीक्षण करने का अधिकार इस्तेमाल किया जा सकता है, बशर्ते न्यायालय की प्रक्रिया में देरी या उसके गलत इस्तेमाल को रोकने के लिए ज़रूरी सावधानियां बरती जाएं।

12. साथ ही, **वादिराज नागप्पा वर्णेकर बनाम शरदचंद्र प्रभाकर गोगते**³ वाद में यह चेतावनी दी गई थी कि प्रति-परीक्षा के बाद पता चली कमियों या खामियों को भरने के लिए साक्षी को दोबारा बुलाने की अनुमति नहीं दी जा सकती, और इस अधिकार का इस्तेमाल सोच-समझकर किया जाना चाहिए, न कि नियमित के तौर पर किया जाना चाहिए।

13. ऊपरोक्त वर्णित निर्णयों में एक बात समान है: किसी साक्षी को दोबारा बुलाने या उससे पुनः परीक्षण करने का मुख्य उद्देश्य क्या है, यही तय करने वाली बात होती है। अगर ऐसा इसलिए किया जा रहा है ताकि किसी कमज़ोर मामले को मज़बूत किया जा सके या ऐसे साक्ष्य पेश किए जा सकें जो पहले से मौजूद थे लेकिन जानबूझकर छिपाए गए थे, तो इसे मामले

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



की कमियों को भरने की कोशिश माना जाएगा। लेकिन, अगर अभिलेख में कोई साफ अस्पष्टता सामने आती है - खासकर ऐसी जो मामले की जड़ से जुड़ी हो - और अगर स्पष्टीकरण से न्यायालय को सच्चाई तक पहुँचने में मदद मिलती है और दूसरे पक्षकार को कोई नुकसान नहीं पहुँचता है, तो ऐसे स्पष्टीकरण की अनुमति न देना न्याय के उद्देश्य को नाकाम कर देगा।

14. सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश XVIII नियम 17 के तहत शक्ति के इस्तेमाल से जुड़े कानूनी सिद्धांतों को - जिन्हें स्थापित न्यायिक निर्णयों के ज़रिए स्पष्ट किया गया है - इस तरह संक्षेप में बताया जा सकता है:

14.1 सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश XVIII नियम 17 के तहत न्यायालय को यह विवेकाधिकार दिया गया है कि वह कार्यवाही के किसी भी चरण में - यहाँ तक कि निर्णय लिखते समय भी - किसी साक्षी को दोबारा बुला सके, अगर वाद के सही निस्तारण के लिए ऐसा करना ज़रूरी हो।

14.2 सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश XVIII नियम 17 के तहत यह अधिकार मुख्य रूप से इसलिए दिया गया है, ताकि न्यायालय खुद अभिलेख पर मौजूद सबूतों में किसी भी अस्पष्टता, संदेह या विसंगति को स्पष्ट कर सके, ताकि सच्चाई तक पहुँचा जा सके और सही निर्णय दिया जा सके।

14.3 यह अधिकार न्यायालय के विवेक पर निर्भर करता है और इसका इस्तेमाल बहुत कम, सावधानी से और खास हालात में ही किया जाना चाहिए; इसे नियमित के तौर पर या सिर्फ इसलिए इस्तेमाल नहीं किया जाना चाहिए कि साक्षी को दोबारा बुलाने से दूसरे पक्ष को कोई नुकसान नहीं होगा।

14.4 सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश XVIII नियम 17 के तहत साक्षी को दोबारा बुलाने की अनुमति किसी पक्षकार द्वारा पहले दिए गए सबूतों में कमियों को भरने, कमज़ोरियों को ठीक करने या खामियों को दूर करने के उद्देश्य से नहीं दी जा सकती।

14.5 साक्षी को दोबारा बुलाने का अधिकार मुख्य रूप से न्यायालय के पास होता है और इसका इस्तेमाल न्यायालय स्वप्रेरणा या किसी पक्षकार के कहने पर कर सकता है, लेकिन ऐसा तभी किया जा सकता है, जब न्यायालय को यकीन हो कि वाद को सही ढंग



से चलाने और सबूतों में मौजूद अस्पष्टता को दूर करने के लिए साक्षी को दोबारा बुलाना ज़रूरी है।

14.6 सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश XVIII नियम 17 का उद्देश्य किसी पक्षकार को साक्षी को वापस बुलाने और उससे पुनः परीक्षण करने का अधिकार देना नहीं है, सिर्फ इसलिए कि बाद में उस पक्षकार को साक्षी से पहले की पूछताछ में कोई कमी या विरोधाभास महसूस हो।

14.7 अगर साक्षी को वापस बुलाने का आवेदन सही नीयत से दिया गया है और इसका उद्देश्य सिर्फ किसी साफ़ विरोधाभास या अस्पष्टता को स्पष्ट करना है, और ऐसी स्पष्टता से न्यायालय को सच्चाई तक पहुँचने में मदद मिलेगी, तो उचित सुरक्षा उपायों के साथ साक्षी को वापस बुलाने की अनुमति दी जा सकती है।

14.8 साक्षी को वापस बुलाने की अनुमति देते समय, न्यायालय को यह पक्का करना चाहिए कि इस प्रक्रिया का गलत इस्तेमाल मामले को टालने के तरीके के तौर पर न हो, और उचित शर्तें लगानी चाहिए, जैसे पूछताछ का दायरा तय करना, गैर-ज़रूरी स्थगन न देना, और कार्यवाही को तेज़ी से पूरा करना है।

14.9 मुख्य और निर्णायक बात यह है कि क्या साक्षी को वापस बुलाने का उद्देश्य सबूतों में कमियों को पूरा करना है जो कि मंजूर नहीं हैं, या विरोधाभासों को दूर करना और अस्पष्टताओं को स्पष्ट करना है, जो कि अनुमेय है और न्याय को विफल होने से बचाने के लिए ज़रूरी हो सकते हैं)

15. इस वाद में, डी.डब्ल्यू.-1 का शपथपत्र, दलीलें और पी.डब्ल्यू.-1 की स्वीकारोक्ति मिलकर सबूतों का एक ठोस आधार बनाते हैं। प्रति-परीक्षा के दौरान डी.डब्ल्यू.-1 का दिया गया एक अलग-थलग बयान—जो उसके अधिवक्ता की गैर-मौजूदगी में दर्ज किया गया था और जिसके बारे में साक्ष्य अधिनियम की धारा 145 के तहत ज़रूरी सवाल नहीं पूछे गए थे—किसी जानबूझकर की गई चूक को उजागर करने के बजाय एक स्पष्ट अस्पष्टता पैदा करता है। पुनः परीक्षण की मांग सिर्फ इस अस्पष्टता को दूर करने तक सीमित है और इसका उद्देश्य कोई नई जानकारी या साक्ष्य पेश करना नहीं है। ऐसी मांग को कमियों को भरने की कोशिश मानना स्थापित विधिक

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



स्थिति का गलत इस्तेमाल है और यह न्यायालय के क्षेत्राधिकार का सही इस्तेमाल न कर पाने के बराबर है।

16. भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के अंतर्गत इस न्यायालय के पर्यवेक्षणीय क्षेत्राधिकार का उद्देश्य यह पक्का करना है कि अवर न्यायालय अपने क्षेत्राधिकार की सीमाओं के भीतर काम करें, उन्हें मिले क्षेत्राधिकार का इस्तेमाल विधि के अनुसार करें और प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का पालन करें। हालांकि यह न्यायालय अंतरिम या प्रक्रियात्मक आदेशों के मामले में अपील सुनने वाली न्यायालय के तौर पर काम नहीं करता है, लेकिन अगर क्षेत्राधिकार का इस्तेमाल न करने से साफ तौर पर अन्याय होता है या किसी पक्ष को निष्पक्ष मौका नहीं मिलता है, तो इसमें दखल देना इस न्यायालय की ज़िम्मेदारी है। जैसा कि सर्वोच्च न्यायालय ने **संग्राम सिंह बनाम चुनाव न्यायाधिकरण, कोटा और पंजाब राज्य बनाम शामलाल मुरारी** के वादों में बार-बार कहा है, प्रक्रियात्मक विधि न्याय का सहायक है और इसे इस तरह से लागू किया जाना चाहिए कि यह असल न्याय में रुकावट डालने के बजाय, उसे आगे बढ़ाए।

17. यह बताया गया है कि विचारण न्यायालय में अगली तिथि 10 फरवरी, 2026 तय की गई है। याचिकाकर्ता के अधिवक्ता ने भरोसा दिलाया है कि उस तारीख को डी.डब्ल्यू.-1 को पेश किया जाएगा और सुनवाई टालने की कोई मांग नहीं की जाएगी। प्रतिवादी के अधिवक्ता ने निष्पक्ष रूप से कहा है कि उन्हें कोई आपत्ति नहीं है अगर उस तिथि को साक्षी से सिर्फ इस सीमित उद्देश्य के लिए पूछताछ की जाए कि देवेंद्र कुमार त्रिपाठी द्वारा जारी किरायेदारी की रसीदों को लेकर जो अस्पष्टता है, उसे स्पष्ट किया जा सके।

18. ऊपर की गई चर्चा को देखते हुए, इस न्यायालय की यह राय है कि डी.डब्ल्यू.-1 को वापस बुलाने की अनुमति देने से न्याय होगा। यह अनुमति केवल उस अस्पष्टता को दूर करने के सीमित और खास उद्देश्य के लिए दी जा रही है, जो प्रति-परीक्षण के दौरान उनके बयान से पैदा हुई है, और जो उनके शपथपत्र और अभिलेख पर मौजूद अन्य सबूतों से मेल नहीं खाती है। ऐसे वापस बुलाने को याचिकाकर्ता द्वारा सबूतों में किसी कमी को पूरा करने की अनुमति के तौर पर नहीं देखा जाएगा, बल्कि इसे केवल विवाद के सही और उचित निस्तारण तक पहुँचने में न्यायालय की मदद के तौर पर देखा जाएगा। इसलिए, एस.सी.सी. पुनरीक्षण सं. 12/2020 में कानपुर नगर की लघुवाद न्यायालय के जज द्वारा 04.02.2025 को पारित आदेश और एस.सी.सी.

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



पुनरीक्षण संख्या 81/2025 में 19.09.2025 को पारित आदेश विधि की दृष्टि में पोषणीय नहीं हैं और उन्हें अपास्त किया जाता है।

19. परिणामस्वरूप, याचिका का निस्तारण इस निर्देश के साथ किया जाता है कि विचारण न्यायालय के समक्ष नियत अगली तिथि, यानी 10 फरवरी, 2026 को, किरायेदार-प्रतिवादी द्वारा साक्षी डी.डब्ल्यू.-1 को पेश किया जाएगा और विचारण न्यायालय द्वारा उससे सख्ती से ऊपर बताए गए सीमित दायरे में पूछताछ की जाएगी। उस तिथि पर किसी भी पक्ष को कोई स्थगन नहीं दिया जाएगा। इसके बाद विचारण न्यायालय विधि के अनुसार वाद को जल्द से जल्द समाप्त करने की कार्रवाई करेगा। यह स्पष्ट रूप से बताया जाता है कि यदि किरायेदार-प्रतिवादी उस तिथि पर उक्त साक्षी को प्रस्तुत करने या उससे पूछताछ कराने में विफल रहता है, तो डी.डब्ल्यू.-1 को वापस बुलाने या उससे पुनः परीक्षण करने का कोई और मौका नहीं दिया जाएगा, और विचारण न्यायालय पहले से मौजूद साक्ष्य के आधार पर वाद का निर्णय करेगा।

(न्यायमूर्ति डॉ. योगेन्द्र कुमार श्रीवास्तव)

5 फरवरी 2026

आरकेके/-